उपसंहार

उपसंहार

हिन्दी कहानी में पिछले कुछ वर्षों में जो परिवर्तन आया है वह सर्वथा आगे की ओर ही ले जाने वाला हो, यह ज़रूरी नहीं है। किसी भी विधा के विकास और ह्रास का प्रश्न अन्य प्रश्नों की अपेक्षा उलझा हुआ होता है। यह मान लेने में एतराज़ नहीं होना चाहिए कि आज की कहानी सदा आगे की दिशा में ही नहीं जा रही है। लेकिन तब इस पर भी सहमत होना पड़ेगा कि आज की कहानी की तलाश 'जेनुइन' की है। वह उस ओर अग्रसारित है जिधर सही ज़मीन की सम्भावनाएँ हैं, क्योंकि झूठ को छाँटते जाने की कोशिश इसके मूल में तो है ही।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद कहानी के क्षेत्र में ही नहीं अपितु समूचे साहित्य के क्षेत्र में जो एक ज़बरदस्त प्रवाह फूट पड़ा था, वह अपने आप में पूर्ववर्तियों की अपेक्षा बिल्कुल ही नया था। यह नयापन मात्र

पाश्चात्य साहित्य के अनुकरण का फल नहीं था और न रचनात्मक स्तर पर बौद्धिक बाज़ीगरी का, किन्तु यह नयापन था समूचे भाव-बोध का जो तत्कालीन जीवन-बोध का परिणाम था । परम्परागत जीवन मूल्यों के विरोध में नई जीवन दृष्टि का एक ऐसा आक्रमण था, जहाँ हर पुरानी चीज़ अस्वीकृत की जाती है । इसलिए उस विशिष्ट संक्रांति - युग में पैदा हुए कहानी साहित्य को 'नई कहानी' नाम से सम्बोधित करना युक्ति संगत लगता है । परन्तु छठे दशक का अन्तिम चरण और सातवें दशक के प्रारम्भिक चरण के बीच की ऐतिहासिक एवं साहित्यिक परिस्थितियों में नई कहानी का ठहराव स्तर परिलक्षित होता है जहाँ से कहानी साहित्य नया मोड़ धारण कर लेती है ।

छठे दशक के साहित्यकारों के सम्मुख अतीत की एक लम्बी परम्परा थी, जीवन-मूल्यों के संस्कारों की जड़े बहुत दूर तक लेखकों के मानस में समा गई थीं । अतः इन साहित्यकारों के सम्मुख एक ऐसा ज़बरदस्त आह्वान था कि कैसे अतीत की ठोस परम्परा से संस्कार मुक्त हों? इन साहित्यकारों की पीढ़ी ने परम्परागत जीवन - मूल्यों की आगोश में जीवन संदर्भों को स्वीकार किया था और इसी पीढ़ी ने परम्परागत मूल्यों के विघटन का अनुभव भी किया था । अतः अपनी ही परम्परा

से अलगाव के लिए उन्हें अपने में एक ऐसी चुनाव - शक्ति का निर्माण करना था, जिसके आधार पर नये और पुराने के बीच युगानुकूल संदर्भों का चुनाव किया जा सके । इस अर्थ में 'नई कहानी' को परम्परा से मुक्त होकर अपने आपको स्थापित करने का प्रयास करना पड़ा जिससे उनकी अवस्था टूट गई । अपनी टूटती अवस्था को बनाये रखने का एक ही विकल्प उसके सामने बच गया कि जैसे तैसे प्रस्थापित, जीवन-स्थितियों से समझौता कर लिया जाये । इसकी परिणति यह हुई कि 'नई कहानी' ज़िन्दगी के सत्य से कटकर इकहरे व्यक्तिगत सत्यों की पुनरावृत्ति करने लगी । इससे उसकी संवेदनशीलता स्थिर होकर गतिहीन बन गई । अत: उसका एक पैटर्न बनने लगा । 'वैयक्तिक सामाजिकता' की दुहाई देने वाली 'नई कहानी' निरे रूमानी अतिरेक और अतिशय अर्थहीन आवृत्तियों के कारण मात्र नारेबाज़ी को ही सर्जनात्मक लेखन समझने लगी। बदलती जीवन स्थितियों को झेल न सकने की विवशता के कारण इसमें एक नई तरह की पलायनवादिता आने लगी ।

सातवें दशक के कहानीकारों के मानसिक ऐतिहासिक संदर्भ अलग थे । यह पीढ़ी जीवन के साथ किसी पूर्व निर्धारित धारणाओं एवं पूर्वाग्रहों से प्रतिबद्ध नहीं थी बल्कि इस पीढ़ी का अपने जीवन से जैविक सम्बन्ध रहा

है । यह पीढ़ी जीवन के साथ सम्बद्ध रह रोमानी धारणा से मुक्त है । सातवें दशक के कहानीकार ने स्वतन्त्रता पूर्व भारतीय जीवन की यातनाओं को प्रत्यक्ष नहीं भोगा था, और न उस 'मोहभंग' की स्थिति का अनुभव किया था जिसे पिछले दशक के कहानीकार जी चुके थे । यह पीढ़ी समकालीन जीवन की बहुस्तरीय अराजकता में जी रही है । उस जीवन का अटूट हिस्सा बनी हुई है । अतः यह पीढ़ी भारतीय जीवन में विकृत रूप को अनुभवों के स्तर पर झेल रही है, जबकि पुराने कहानीकार का इस जीवन से केवल बौद्धिक सम्बन्ध रहा है । दोनों पीढ़ियों के अपने जीवन के मानसिक संदर्भ बिल्कुल अलग अलग हैं ।

इन कहानीकारों ने जिस सामाजिक वातावरण में होश सम्भाला था उसमें मानवीय सम्बन्धों के सारे सूत्र टूटे हुए थे और जो बचे हुए थे वे किसी स्थिर व्यवस्था से चिपके हुए थे । इन कहानीकारों ने यह अनुभव किया कि मानवीय सम्बन्धों की शोकान्तिका उस 'व्यवस्था' में है जो सम्बन्धों को अपने क्रूर पंजों में दबा रही है । इसलिए ये कहानीकार 'व्यवस्था' पर जितना टूट कर प्रहार करते हैं, उतना सम्बन्धों पर नहीं ।

सम्बन्धों की अराजकता के प्रति वे अपना क्षोभ एवं आतंक भी प्रकट करते हैं किन्तु सम्बन्धों के विघटन से टूट कर किसी कटी हुई शून्यवत दुनिया में प्रश्रय नहीं लेते । अतः इनकी कहानियों में व्यक्ति टूटा हुआ है, ऊबा हुआ है, पस्त है पर निष्क्रिय नहीं है । वह जी रहा है और जीना चाहता है । उसके पास तर्काधिष्ठित जीवन दृष्टि है । इसी अर्थ में वह पिछले दशक के कहानी के नायक से भिन्न है । इस प्रकार सातवें दशक की कहानी जीवन यथार्थ से सीधे टकराती है । इस टकराव के पीछे एक ऐसी पूर्वाग्रह रहित दृष्टि है जो किसी भी परम्परागत मूल्य-परिपाटी को नकारती हुई अस्तित्व - बोध की गहरी जटिलता की अभिव्यक्ति करती है । साथ में इस कहानी ने 'व्यवस्था' के प्रति जो प्रचण्ड आक्रोश व्यक्त किया है उसका स्तर बेहद तल्ख एवं बेलाग होता हुआ आधुनिक व्यक्ति के सम्बन्ध में एक व्यंग्य और करुणा का अहसास कराता है ।

सातवें दशक की कहानी सीधे ज़िन्दगी के यथार्थ से टकराती है इसलिए उस यथार्थ को शब्दों में पकड़ने का प्रयत्न करती है जो इतना आसान नहीं है । यहाँ शब्दों से बाहर निकल कर प्रत्यक्ष अनुभव को अपने आप उभरने देने का प्रयत्न किया जाता है । हर बाहरी एवं प्रस्थापित माध्यम को अस्वीकार करने की छटपटाहट रहती है । आज

का लेखक स्थितियों से प्रत्यक्ष रूप से मिला हुआ है । भीड़ में गुज़रता हुआ, भीड़ से दूर हट कर अपनी 'होनी' को 'होते' हुए प्रकट करता है । पिछली कहानियाँ अनुभव की खोज तक ही सीमित रह गई जबकि आज की कहानी यह 'खोज' 'पहचानने' में रूपांतरित हुई और अनुभवों को जीवन के जीवन्त संदर्भों में अभिव्यक्ति मिली ।

सातवें दशक की कहानी में 'सचेतन' तथा 'अकहानी' के आन्दोलन भी हुए हैं । 'सचेतन' कहानी को आन्दोलन का रूप देने वाले डॉ० महीप सिंह की घोषणा के अनुसार 'सचेतनता' एक दृष्टि है, जिसमें जीवन जिया भी जाता है और जाना भी जाता है । सचेतन दृष्टि जीवन से नहीं जीवन की ओर भागती है । सचेतन कहानीकार भविष्य-हीन नहीं है । अकहानी शिल्पहीन शिल्प की कहानी है । आधुनिक व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की खोज में लगा हुआ है । वह हर प्रस्थापित का इन्कार करता हुआ जीवन - बोध को जी रहा है । स्वाभाविक ही है कि इस खोज की अभिव्यक्ति किसी भी दृष्टांतपरक कथानक या 'टाइप' जैसे चरित्रों द्वारा अशक्य है । इस लिए इस कथाकार का जो भी शिल्पहीन शिल्प है वह व्यक्तिगत आत्मप्रलाप से अधिक मेल खाता है । अनुभवों के स्तर पर दृष्टि की सचेतनता और अभिव्यक्ति

के स्तर पर शिल्पहीनता का शिल्प आधुनिक भाव-बोध को सच्चे अर्थ में कलात्मक स्तर पर उठा सकता है ।

इस प्रकार कहानी उत्तरोत्तर विकास की ओर बढ़ रही है । इसके भविष्य के प्रति निश्चित आशाएँ बन्ध रही हैं और कई सम्भावनाएँ उभर रही हैं । यह सही है कि सातवें दशक में कई कथा आन्दोलन चले जिन्होंने जल्दबाज़ी में कुछ फतवे जारी किए । तब लगा था कि कहानी - साहित्य ठीक दिशा की ओर नहीं जा रहा है किन्तु यह बात शीघ्र ही समाप्त हो गई और अब कहानी आधुनिक जीवन के साक्षात्कार को रचना के स्तर पर स्थापित करने के प्रयासों में लग गई है । आज कही हिन्दी कहानी का निर्माण यथार्थ की बुनियाद पर होता है, इसलिए इसका शिल्प भी यथार्थ की ही उपज है । आज का जीवन द्रुतगति से बदला हुआ संश्लिष्ट से संश्लिष्टतर होता जा रहा है । जीवन में सामाजिक संस्थाओं और मानवीय सम्बन्धों के बीच कई उलझे हुए प्रश्न निर्माण हो रहे हैं, उसी तरह 'कहानी' की प्रकृति एवं प्रवृत्ति संश्लिष्ट से संश्लिष्टतर होती हुई द्रुतगति से बदलती जा रही है । आज की कहानी में जो दुनिया उभर रही है, उसमें रहने वाला व्यक्ति किसी भी व्यवस्था का गुलाम नहीं है । वह भूत से

पूर्णतः कटा हुआ है और भविष्य के स्वर्णिम सपनों पर उसने अपनी दृष्टि केन्द्रित नहीं की है । वह वर्तमान की वास्तविक स्थितियों से जूझता हुआ जीवन की विसंगतियों एवं विडम्बनाओं का भागीदार बन गया है । वह किसी भी प्रकार की नारेबाज़ी अथवा गोष्ठणाबाज़ी से मुक्त है । आज का व्यक्ति अपने लिए अपनी दुनिया चाहता है । जब उसका वर्तमान का एक-एक क्षण झेलना दुष्कर है तब वह भविष्य के स्वर्णिम कुहासे में कैसे कूद सकता है? उसका भूत तो चला गया है और उसका आने वाला कल वही 'कल' है जो साधार है, जिधर सही भूमि की सम्भावनाएँ हैं ।

इस प्रकार आज का कहानीकार यथार्थ और अपने विलक्षण वर्तमान के सामने रू-ब-रू खड़ा है । इसका सूक्ष्म चित्रण तो आज का कहानीकार कर रहा है और भविष्य में भी होने की सम्भावना है । आज की कहानी सही आदमी की तलाश में है । वह पुरानी रचनात्मकता को तोड़ कर ऐसे यथार्थ को खोज रही है जो कि समयानुकूल हो । इसके लिए आज के कहानीकार को अभिव्यक्ति के उचित एवं सशक्त माध्यम की खोज करनी पड़ती है और यह खोज अब भी जारी है । आशा है कि हिन्दी कहानी का रचनाकार इस खोज में सफल होगा ।

- 0 -